पं. दीनदयाल उपाध्याय के उपेक्षित एकात्म मानव दर्शन की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सार्थकता

डॉ. श्वेता मल्होत्रा

असिस्टेंट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग, आर्य महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाहजहांपुर

पं. दीनदयाल उपाध्याय जी भारतीय राजनीतिक एवं आर्थिक चिंतन को वैचारिक दिशा देने वाले पुरोधा थे। इनके विचारों को तत्कालीन कांग्रेसी दिग्गजों के वर्चस्व व प्रभाव के कारण महत्व नहीं दिया गया।

दीनदयाल उपाध्याय का राजनीति में आगमन उस समय हुआ, जब भारत आजादी से कुछ ही दूरी पर था, देश का महौल अजीबो गरीब स्थिति में था। क्रांतिकारी शहादत दे रहे थे, कूटनीतिक राजनेता अपनी अपनी ताजपोशी के लिये देश को बाँटने की तैयारी कर रहे थे। देश के हालात बद से बदतर थे। अंग्रेजों को भारत छोड़ने का गम तो था, पर एक सुकून भी था कि उन्होंने देश के ऐसे हालात बना दिये जिससे भारत को उबरना बहुत कठिन था।(1)

भारत के आजाद हो जाने के बाद देश की सत्ता ऐसे वर्ग के लोगों के हाथ आ गयी, जिन पर अंग्रेजों की नीतियों एवं पाश्चात्य संस्कृति का जबरदस्त प्रभाव था। इन भारतीय नेताओं का जीवन, शिक्षा उच्च घरानों में तथा विदेशों में हुयी। ऐसे लोग ही दोहरे मापदण्ड अपना कर स्वतन्त्रता आन्दोलन को हवा भी देते रहे, तथा अंग्रेजों से सीधे दुश्मनी भी नहीं ली। जो वाकई देश के हितैषी व प्रेमी थे वे बिना किसी स्वार्थ के अपना घर– परिवार, सर्वत्र लुटा कर फाँसी के फंदे पर झूलते रहे। देश के आजाद हो जाने के बाद इन शहीदों को भुला दिया गया, तथा सभी कूटनीतिक राजनेता सत्ता के लाभ के लिये किसी भी हद तक जाने को तैयार थे। नेहरू तथा जिन्ना के बीच सत्ता का विवाद आखिरकार भारत के विभाजन का कारण बना।

दूसरी ओर भारत की बदहाल स्थिति चरम सीमा पर थी। किसान बंधुआ मजदूर बन चुका थाए जो अंग्रेजों की जी हुजूरी कर रहे थे, वे सम्पन्न थे तथा सत्ता भी उन्हीं के हाथ आने वाली थी। सत्ता के लालची लोग यह समझ चुके थे, कि यदि देश पर राज करना है, तो अंग्रेजों की ही नीति अपनानी होगी, गरीब को गरीब ही रहने दिया जाये, शिक्षा व अन्य सुविधायें समाज के सम्पन्न लोगों तक ही सीमित रखी जाये।

यही कारण है कि आज देश को आजाद होने के 70 साल बाद भी भारत की दो तिहाई जनसंख्या अशिक्षित तथा मूलभूत सुविधाओं से वंचित है। उपरोक्त परिस्थितियों में देश में कई विचार धाराओं ने जन्म लिया तथा कई प्रकार के वैचारिक वाद सामने आये। एक तरफ पश्चिम का उपभोगवाद था दूसरी तरफ मार्क्सवाद, लेनिनवाद, माओवाद था,

समाजवाद का विचार भी अस्तित्व में था। पाश्चात्य चिंतन उपभोगवाद पर आधारित था, इसके केन्द्र में व्यक्ति का, व्यक्ति को अपनी सुख–सुविधाओं के लिये संलग्न रहने व प्रयास करते रहने का अधिकार है। इस विचार से प्राकृतिक संसाधनों को बेहिसाब व बेरहमी से दोहन किया गया। भौतिक विकास भी हुआ, लेकिन प्रकृति विनाश के कगार पर पहुँच गयी। जिस पर आज विश्वभर में सम्मेलन हो रहे हैं। सभी देश एक जुट होकर हर सम्भव प्रयास कर रहे हैं, कि किस तरह पृथ्वी को बचाया जाये। पर नतीजा लगभग शून्य है। उपभोगवाद में समाज को भी अराजकता की स्थिति में पहुँचा दिया है। समाज बिखर रहा है। परिवार टूट रहे हैं। बुजुर्ग माता–पिता वृद्ध आश्रम में भेजे जा रहे हैं। दीनदयाल जी ने इसकी कल्पना पहले ही कर ली थी। इसके प्रति वे सावधान भी रहते थे, पर ऐसा नहीं था कि उनके विचार संकुचित थे।

विदेश नीति व विदेशों से सम्बन्धों के बारे में भी उन्होंने विचार रखे। विदेशों के साथ सहयोग बढ़ाना चाहिये, लेकिन हमको यह देखना होगा कि दूसरे देशों की कौन सी बात हमारे हित में होगी। उनके वाद को यथावत स्वीकार नहीं करना चाहिये, हमको अपने देश की परिस्थितियों पर भी विचार करना चाहिये।

दीनदयाल जी के उक्त विचारों का महत्व आज महसूस किया जा रहा है। हमारे यहाँ व्यक्तिगत स्वार्थ के चलते परिवार टूट कर छोटे होते जा रहे हैं, माता पिता को बोझ समझकर घर से निकाला जा रहा है, वृद्ध आश्रमों का चलन बढ़ता जा रहा है। खानपान, रहन, सहन, वातावरण सब बिगड़ता जा रहा है। ऐसे में दीनदयाल जी के विचार ही हमें रास्ता दिखा सकते हैं।

इसी प्रकार मार्क्सवादी व वामपंथी विचारधारा ने भी समाज व देश का अहित किया। इसमें उपभोगवाद को सशक्त बनाया गया था। व्यक्ति की जगह सत्ता को केन्द्र में रखा गया। यह मान लिया गया कि व्यक्ति भी व्यवस्था का यंत्रवाद है। सत्ता ही समाज को सही दिशा में संचालित करेगी। कम्यूनिस्टों ने भी भारत को विदेशी नजरिये से देखा, इसलिये उन्हें अपने देश में कोई अच्छाई नजर नहीं आती। उन्होंने आत्म गौरव विहीन समाज बनाने का प्रचार किया। जो कुछ अच्छा है वह विदेशों से मिला। केवल सरकार के भरोसे सुधार का विचार भी पूर्ण रूप से विफल रहा।

इसी समय में इन्हीं परिस्थितियों के मध्य एक महापुरुष पं. दीनदयाल उपाध्याय ने भी अपने विचार रखे उनके विचार भारत को मजबूत बनाने अपने पैरों पर खड़े होने से सम्बन्धित थे, कोई वाद नहीं थे बल्कि एक दर्शन था। उनके विचार प्राचीन अवधारणा 'वसुधैव कुटुम्बकम' एवं 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का ही दूसरा स्वरूप है।

दीनदयाल जी का चिंतन शाश्वत विचारधारा से जुड़ता है। इसके आधार पर वह राष्ट्रभाव को समझने का प्रयास करते हैं। मनुष्य के जीवन की सुसंगतता व सामंजस्य मानव समूह तथा सृष्टि के साथ कैसे स्थापित होगा और जीवन से दुख, अभाव, शोषण, विषमता को

हटाकर सुख, समृद्धि, सामंजस्य व सेवा भाव लाने वाली नीतियाँ क्या होंगी। इन सारे प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास है– एकात्म मानव दर्शन। एकात्म मानव दर्शन, अन्त्योदय जैसे विचारवाद की श्रेणी में नहीं आते। यह दर्शन है, जो हमारी ऋषि परम्परा से जुड़ता है। इसके केन्द्र में व्यक्ति या सत्ता नहीं है। जैसा कि पश्चिमी या वामपंथी विचारों में कहा गया है। आपके दर्शन में व्यक्ति, मन, बुद्धि, आत्मा सभी का महत्व है। प्रत्येक जीवन में आत्मा का निवास होता है। आत्मा को परमात्मा का अंश माना जाता है। यही एकात्म दर्शन है। इनमें समरसता का विचार है। इसमें भेदभाव नहीं है।

व्यक्ति का अपना हित स्वाभाविक है, लेकिन सब कुछ नहीं है। उपभोगवाद से लोक कल्याण सम्भव नहीं है। इसमें व्यक्ति का कल्याण भी नहीं है, यदि ऐसा होता तो भौतिकवाद की दौड़ में व्यक्ति को कभी तो संतोष मिलता। पर ऐसा नहीं हुआ जो मिल गया, फिर उसके आगे की चिन्ता में दौड़ शुरू हो जाती है। मन कभी भी संतुष्ट नहीं होता। व्यक्ति प्रारम्भिक इकाई मात्र है। लेकिन वह परिवार का हिस्सा मात्र है। परिवार का हित हो तो व्यक्ति को अपना हित छोड़ देना चाहिए, समाज का हित हो तो परिवार का हित छोड़ देना चाहिये। देश का हित हो तो समाज का हित छोड़ देना चाहिये। राष्ट्रवाद का यह विचार प्रत्येक व्यक्ति में होना चाहिये। इसके विपरीत पाश्चात्य उपभोगवाद में व्यक्ति अपने स्वार्थ में समाज यहाँ तक कि देश को भी छोड़ देता है।

पाश्चात्य चिंतन इच्छाओं को बराबर बढ़ाने और आवश्यकताओं की निरन्तर पूर्ति का समर्थक है। इसमें मर्यादा का कोई महत्व नहीं होता है। यह भारत का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि हमारे यहाँ देश के महापुरुषों चिंतकों तथा महान विचारकों को जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन भारत की प्रगति समृद्धि तथा विकास के लिये समर्पित कर दिया था उन्हें हमारे भारतीय नेताओं ने दल तथा जाति के आधार पर बाँटकर उनका बंटवारा अपने–अपने हितों व स्वार्थ के लिये कर लिया। इनके विचारों का नीतियों का देश के हित में प्रयोग नहीं किया गया। चाहे वह डॉ. भीमराव अम्बेडकर हो। जिन्होंने सम्पूर्ण राष्ट्र के विकास की बात की पर उनके विचारों को तोड़मरोड़ कर एक विशेष जाति तथा दलित नेता के रूप में प्रस्तुत किया गया। इसी प्रकार चाहे लोहिया हो चाहे पं. दीनदयाल उपाध्याय हों सभी एक विशेष दल के ब्राण्ड एम्बेसडर बन के रह गये। इनका प्रयोग समय–समय पर अपने हितों को पूरा करने के लिये किया जाता रहा।

सादा जीवन उच्च विचार की प्रतिमूर्ति दीनदयाल जी के विचारों में देश की मिट्टी की महक को अनुभव किया जा सकता है। वह वास्तव में राजनीति में ऋषि परम्परा के मनीषी थे, वे भारतीय जनसंघ से अवश्य जुड़े रहे, फिर भी दलीय संकीर्णताओं से ऊपर थे। वे राजनीति का अध्यात्मीकरण चाहते थे। उनकी आस्थायें प्राचीन अक्षय राष्ट्र जीवन की जड़ों से रस ग्रहण करती थी। किन्तु वे रूढ़िवादी नहीं थे। वे राजनेता मात्र नहीं थे, वे उच्च कोटि के चिंतक, विचारक और लेखक भी थे। इस रूप में उन्होंने श्रेष्ठ शक्तिशाली और संतुलित राष्ट्र की कल्पना की थी। तत्कालीन व्यवस्था तथा परिस्थितियों में आपके विचारों को तथा

दर्शन को महत्व नहीं दिया गया गलत नीतियों का अनुसरण कर आज देश को तथा पूरे विश्व को विनाश के कगार पर पहुँचा दिया गया। आज की परिस्थितियों को देखते हुये पं. दीनदयाल जी के विचार व दर्शन ही हमें सही दिशा दे सकते हैं।

एकात्म मानव दर्शन पर आधारित आर्थिक विचार

1. सुनिश्चित लक्ष्य – पंडित दीनदयाल जी के अनुसार जब तक लक्ष्य निश्चित नहीं होता तब तक निश्चित दिशा भी प्राप्त नहीं हो सकती। अंतिम बिंदु के निर्धारण के बिना माध्यम का भी चुनाव नहीं किया जा सकता। अतः लक्ष्य का निर्धारण आवश्यक है।
2. आत्मशांति – उन्होंने कहा कि भारतीय संस्कृति अध्यात्मिक है। यहाँ की संस्कृ ति में शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ ही आत्मशांति की भावना मूल में है जो पश्चिमी संस्कृति में नहीं है।
3. राष्ट्रीय पहचान– पश्चिमी देशों से भिन्न हमारे देश के निवासियों का लक्ष्य होना चाहिए कि देश सही दिशा में आगे बढे। जिसमें हर नागरिक अपना योगदान देने को तत्पर हो। जब देश का प्रत्येक नागरिक अपनी क्षमता अनुरूप विकास में योगदान देगा,तब देश का सर्वोत्तम विकास होगा। उनका कहना था कि भारत इसलिए समस्याग्रस्त है, क्योंकि नागरिकों की राष्ट्रीय पहचान की अनदेखी हुई है।
4. क्षरणकोष का सिधान्त – पंडित दीनदयाल जी के अनुसार हम सभी को ध्यान देना होगा कि फल तोड़ते समय पेड़ को किसी प्रकार की क्षति न पहुंचे। इस कथन के द्वारा यह बताया कि उद्योगों के कच्चे माल के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्याधिक दोहन न होकर अपितु नियंत्रित उपयोग का मूल सिद्धांत होना चहिये।
5. प्रत्येक को रोजगार – पंडित दीनदयाल जी ने कहा था कार्य कि संभावना हर आर्थिक नियोजन का प्राथमिक उद्देश्य होना चाहिये। एक प्रगतिशील अर्थव्यवस्था में हर काम करने वाले हाथ को काम मिलना चाहिए। ऐसा तभी संभव है जब देश के पास पर्याप्त कोष हो।
6. नियंत्रित उपयोग – उनके अनुसार धन तभी संचित किया जा सकता है जब उपयोग पर नियंत्रण हो। आर्थिक रूप से कमजोर देश तब कर्ज में डूब जाते हैं जब वो उत्पादन और उपयोग के आर्थिक सुदृढ़ देशों के ढांचे को अपनाते हैं।
7. मशीनें श्रमिक की सहायक – मशीनें किसी भी देश की औद्योगिक संपत्ति होती हैं। परन्तु इस संपत्ति को अर्जित करते समय इसका ध्यान रखना चाहिए कि श्रमिक के शारीरिक श्रम को कम करके, उसकी क्षमता तथा कार्यनिपुणता में बढ़ोत्तरी करे। मशीनें श्रमिक की सहायक होनी चाहिए न की प्रतिद्वंदी।
8. समग्र विकास –अर्थिक नीतियों के के मूल में मानव का समग्र विकास होना चाहिए क्योंकि वह एक समग्रस्वरूप है।

9. आर्थिक विकेंद्रीकरण – पंडित दीनदयाल जी के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का समग्र विकास तभी संभव है जब आर्थिक विकेंद्रीकरण हो। क्योंकि उनके अनुसार आर्थिक केंद्रीकरण अमानवीय है।
10. स्वदेशी को बढ़ावा – पंडित दीनदयाल जी ने कहा था कि हमारे आर्थिक पुनर्निर्माण में स्वदेशी आधारशिला के रूप में सम्मलित होना चाहिए। विदेशी उत्पादों पर निर्भरता ने हमारे व्यक्तित्व को क्षति पहुंचाई है। स्वदेशी अपनाना न तो प्रतिक्रियावादी है, न पुरातन को ढोना, अपितु ये हमारे व्यक्तित्व के लिए गौरव कि बात है।

संदर्भ

1. दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वाङ्मय– डॉ. महेश चंद्र शर्मा
2. राजनीतिक आर्थिक विश्लेषक अनुपम त्रिवेदी